International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 06-01-2026; Accepted: 05-02-2026; Published: 20-02-2026
Volume 12, Issue 1, 2026, Page No. 146-148

भारतीय ज्ञान परंपरा और शिवानी के उपन्यास

सलमान[1], आचार्य पी. राजरत्नम[2]
[1] हिन्दी विभाग, तमिलनाडु केन्द्रीय विश्वविद्यालय, तिरुवारूर, तमिलनाडु, भारत
[2] शोध निर्देशक, हिन्दी विभाग, तमिलनाडु केन्द्रीय विश्वविद्यालय, तिरुवारूर, तमिलनाडु, भारत

सारांश
शिवानी (गौरा पंत) के उपन्यास भारतीय ज्ञान परंपरा की सजीव व्याख्या प्रस्तुत करते हैं, जहाँ धर्म, कर्त्तव्यबोध, लोकमूल्य, संस्कार और आत्मानुभूति जैसे तत्व स्त्री–पात्रों के जीवनानुभवों से गहराई से जुड़े हैं। भारतीय ज्ञान परंपरा केवल ग्रंथों तक सीमित न होकर लोकजीवन, अनुभव और आस्था में रची–बसी परंपरा है, जो सत्य, अहिंसा, संतुलन, करुणा और आत्मबोध को जीवन का केंद्र मानती है। शिवानी के प्रमुख उपन्यासों मायापुरी, चौदह फेरे, श्मशान चंपा, कृष्णकली, भैरवी आदि में स्त्री पात्र न केवल अपने सामाजिक व पारिवारिक कर्त्तव्यों का निर्वाह करती हैं, बल्कि आत्मसम्मान, त्याग और आत्मान्वेषण के माध्यम से जीवन के गहन सत्य को भी पहचानती हैं।
उनके साहित्य में धर्म बाह्य क्रिया नहीं, बल्कि अंतः करण की शुचिता और आत्मानुशासन है; संस्कार परंपरा और आधुनिकता के बीच सेतु का कार्य करते हैं। लोकजीवन, लोकगीत, लोकविश्वास और सांस्कृतिक चेतना उनके लेखन को भारतीय लोकबुद्धि से जोड़ते हैं। साथ ही, आत्मानुभूति और आध्यात्मिक दृष्टि उनके पात्रों को संघर्ष और पीड़ा से ऊपर उठकर आत्मबोध और मुक्ति की ओर ले जाती है। यह शोध सिद्ध करता है कि शिवानी की रचनाएँ भारतीय ज्ञान परंपरा का आधुनिक पुनर्पाठ हैं, जहाँ स्त्री की चेतना परंपरा को तोड़ती नहीं, बल्कि उसमें नई ऊर्जा, मूल्य और जीवन–दृष्टि का संचार करती है।

मूल शब्दः भारतीय ज्ञान परंपरा, शिवानी के उपन्यास, धर्म और कर्त्तव्यबोध, त्याग, आत्मानुभूति, संस्कार, आधुनिकता, लोकज्ञान, सांस्कृतिक चेतना, आत्मान्वेषण

भारतीय ज्ञान परंपरा का मूल स्वर सदैव मानवीय संवेदना, नैतिकता, धर्म, सत्य और आध्यात्मिक चेतना से जुड़ा रहा है। ये ज्ञान परंपरा केवल मोटे–मोटे ग्रंथों में सीमित नहीं, बल्कि लोक के जीवन आस्था की सांसों में घुली हुई है। हमारी भारतीय संस्कृति में ज्ञान का अर्थ केवल बौद्धिकता नहीं, बल्कि आत्मबोध, संयम, करुणा और संतुलन की अनुभूति भी है। इसी जीवनदृष्टि को आधुनिक संदर्भों में पुनर्परिभाषित करने वाली लेखिकाओं में 'शिवानी' (गौरा पंत) का नाम प्रमुख है। शिवानी के उपन्यासों में भारतीय ज्ञान परंपरा के आदर्श–जैसे धर्म, कर्त्तव्य, लोकमूल्य, संस्कार और स्त्री की 'शक्ति'–न केवल अभिव्यक्त होते हैं, बल्कि वे स्त्री–अस्तित्व की नई व्याख्या भी करते हैं।
भारतीय ज्ञान परंपरा का मूल वेदों, उपनिषदों, पुराणों, महाकाव्यों, नीति–कथाओं और लोक के जीवन में निहित हैं। यह परंपरा मनुष्य के जीवन को चार पुरुषार्थों – 'धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष' के संतुलन से परिभाषित करती है। यहाँ ज्ञान का उद्देश्य केवल बुद्धि–विकास नहीं, बल्कि 'जीवन का समग्र विकास' है। भारतीय चिंतन में यह विश्वास है कि —

"सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म" (तैत्तिरीय उपनिषद्)
अर्थात् सत्य, ज्ञान और अनंतता ही ब्रह्म है।

इस दृष्टि से ज्ञान का अंतिम लक्ष्य आत्मसाक्षात्कार है। यही दृष्टि शिवानी के पात्रों में भी दिखाई देती है, जहाँ बाहरी संघर्षों के मध्य आत्मिक संतुलन की खोज प्रमुख है।
शिवानी के लेखन का क्षेत्र व्यापक है उन्होंने – मायापुरी, चौदह फेरे, श्मशान चंपा, कृष्णकली, अतिथि, समर्पिता, भैरवी, रति विलाप, जैसे उपन्यासों में स्त्री के अंतर्मन, उसके संघर्ष, प्रेम, त्याग और आत्मसत्ता की गहन खोज की है। उनका साहित्य भारतीय समाज की उस सांस्कृतिक धारा से जुड़ा है, जो परंपरा को नकारती नहीं, बल्कि उसमें नये अर्थ खोजती है।

धर्म, कर्त्तव्यबोध और त्याग

भारतीय ज्ञान परंपरा में 'धर्म' केवल धार्मिक आचार नहीं, बल्कि यह जीवन जीने की एक शैली है जिसका कर्त्तव्यबोध के साथ पालन करने की हिदायत दी जाती है। हर किसी का जीवन एक खास परिधि में बंधा होता है उसे कर्त्तव्यों का सख्ती से पालन करना होता है और जो व्यक्ति इसे नहीं कर पता है उसे ही धर्मच्युत माना जाता है। जैसे विद्यार्थी का धर्म है शिक्षा का अर्जन करना, शिक्षक का धर्म है विद्यार्थियों को शिक्षा देना इन दोनों में से जिसने भी इसका पालन नहीं किया वह अपने धर्म से भटका हुआ माना जाता है। स्त्रियों के संदर्भ में कर्त्तव्यता का बोध और भी गहरे स्तर पर जुड़ा हुआ है जिसके कारण वह अधिक त्यागशील और सहृदय होती हैं।
शिवानी के पात्र अपने निर्णयों में इसी धर्मबोध से प्रेरित होते हैं। उदाहरण के लिए 'मायापुरी' उपन्यास की नायिका 'शोभा' अपने जीवन में अपने कर्त्तव्यों से हटती हुई अपने धर्म के पालन से पलायित होती हुई दिखती है तो वह अपनी इच्छाओं का त्याग कर समर्पण कर देती है। वह जिससे प्रेम करती है उसकी भलाई के लिए उसे ही छोड़ देती है वह कहती है –"वही तो है अपराधिनी। इस घर की शांति को उसी ने तो विनष्ट कर दिया है। स्नेहमयी मौसी को उसने शत्रु बना दिया है, घर के एकमात्र पुत्र को, जिस पर किसी और का अधिकार था, उसी ने तो छलनामयी बनकर बांध लिया था। कितने हृदयों की अशान्ति का कारण बन गई है वह। परसों से उसकी फाइनल परीक्षा थी, सात दिन पश्चात् परीक्षा समाप्त होते ही वह मौसी के चरणों की पावन धूलि माथे पर लगाकर चुपचाप चली जाएगी।" [1]
शिवानी के उपन्यास 'चौदह फेरे' में नंदी के चरित्र में भी यह त्याग की भावना और तीव्र रूप में दिखती है वह अपने पति, बेटी और इस सांसारिक माया को छोड़कर गुरु की सेवा में चली जाती है। शिवानी लिखती हैं – "मूर्ति की अडिग भव्यता से टक्कर लेती हुई वह भी एक अचला मूर्ति–सी ही लग रही थी।... चेहरे पर विकार, हर्ष, विषाद, चिंता, आवेग की एक भी रेखा नहीं थी।

न वह किसी की पत्नी थी, न बहन, न किसी की चाची थी, न माँ। आनंद के किसी सूत्र को पकड़कर, वह स्वर्ग के सिंहासन पर बैठी थी। न अब पुत्री का वियोग था, न पति की अवहेलना।" [2] यह 'गीता' के "निष्काम कर्मयोग" की भावना से मेल खाता है –

"कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।"

शिवानी की स्त्रियाँ अपने कर्त्तव्यों को निभाते हुए जीवन के गूढ़ अर्थों को समझती हैं। उनके लिए धर्म कोई बाहरी अनुशासन नहीं, बल्कि अंतः करण की शुद्धता है।

संस्कार, परंपरा और आधुनिकता का संगम

भारतीय ज्ञान परंपरा का सबसे बड़ा आधार संस्कारों की निरंतरता है। संस्कार न केवल व्यक्ति के जीवन को दिशा देते हैं, बल्कि समाज के नैतिक और सांस्कृतिक ताने–बाने को भी सुदृढ़ बनाते हैं। इन्हीं के माध्यम से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक मूल्य, मर्यादा और जीवन–दर्शन का संचरण होता है। संस्कार व्यक्ति को संयम, करुणा, कर्त्तव्य और अनुशासन के मार्ग पर चलना सिखाते हैं, जिससे उसका जीवन समाज और प्रकृति दोनों के प्रति उत्तरदायी बनता है। इस प्रकार, संस्कारों की निरंतरता ही भारतीय संस्कृति की जीवन्तता, स्थायित्व और विश्वमानवता की भावना का आधार है। शिवानी की नायिकाएँ शिक्षित, आधुनिक और आत्मनिर्भर होते हुए भी भारतीय संस्कारों से गहराई से जुड़ी रहती हैं। उदाहरण के लिए 'मायापुरी' की नायिका शोभा और चौदह फेरे की 'अहल्या' अपने जीवन के निर्णय स्वयं लेती है, परंतु उसके भीतर भारतीय स्त्री के मूल संस्कार जीवित रहते हैं। शिवानी 'शोभा' के चरित्र को व्याख्यायित करते हुए लिखती हैं –"मौसी की सेवा उसने अपना ध्येय बना लिया। समय पर उन्हें दवा देती, अवश पैरों में नारायण तेल की मालिश करती, बालों में तेल डालकर चोटी कर देती और पढ़कर अखबार सुनाती। मौसी कहती भी, "बेटी, कब तक दिनभर मेरे पास बैठी रहेगी, जा थोड़ा घूम आ, तबीयत बहल जाएगी।" पर शोभा कहती है, नहीं मौसी, मुझे कहीं जाना अच्छा नहीं लगता।" उसके विचित्र स्वभाव पर कभी गोदावरी को बड़ा आश्चर्य होता। यूनिवर्सिटी में जाने के पश्चात् भी उसके स्वभाव में विशेष परिवर्तन नहीं हुआ चुपचाप सिर झुकाए मंजरी के साथ वह जाती और लौटने पर पुनः अपने कार्य में संलग्न हो जाती।" [3] शिवानी की नायिकाओं में आधुनिकता और परंपरा का सुंदर संगम दिखाई देता है। 'मायापुरी' की शोभा शिक्षित और आधुनिक होते हुए भी अपने संस्कारों से जुड़ी रहती है। इसी प्रकार 'चौदह फेरे' की अहल्या जिसका लालन–पोषण भले ही अत्याधुनिक पश्चिमी संस्कारों में हुए हो, परंतु उसके भीतर भारतीय स्त्री के मूल संस्कार जीवित रहते हैं। इस प्रकार, शिवानी की नायिकाएँ दिखाती हैं कि आधुनिकता अपनाते हुए भी भारतीय स्त्री अपने परंपरागत मूल्यों और संस्कारों से दूर नहीं होती।

लोकज्ञान और सांस्कृतिक चेतना

शिवानी की भाषा और शैली लोकजीवन की गंध से भरी है। उनके पात्र गाँव, कस्बे, लोकगीत, लोकविश्वास और रीति–रिवाजों से जुड़े हैं। यह लोकानुभव भारतीय ज्ञान परंपरा के अनुभवजन्य ज्ञान की याद दिलाता है, जहाँ जीवन ही सबसे बड़ा शिक्षक माना गया है। उनके उपन्यासों में लोक और शास्त्र का सुंदर समन्वय है। 'चौदह फेरे' में शिवानी लोक विश्वास और रीति का एक उदाहरण पेश करती हैं जिसमें वह घर के दरवाजे छोटे होने पर कहती हैं कि – "ये इसीलिए बनाए गए हैं बेटी, कि घर में आई हमारी अंग्रेज़ी पढ़ी–लिखी बहू–बेटियां भी सिर झुकाकर चलना सीख सकें।" [4] इसी तरह से विवाह संबंधी रीतियों और परंपराओं का भी मार्मिक चित्रण भी शिवानी करती हैं। गाँव में औरते विवाह के उत्सव में 'शकुन–आंखर' गीत गाती हैं –"भावी वर के कुलगोत्र का परिचय देती वे सुहाग और घोड़ियां गाने लगीं, कभी चम्पे की कली–सी बन्नी के लिए एकदम अयोग्य बन्ने के घोर श्यामवर्ण का उपहास उड़ाती और कभी समधी को गाय के गोठ में, भड़ुवा बनाकर बांधने की कामना करती, एक से एक गालियां गातीं।" [5] शिवानी के लेखन में लोकगीत, रीति–रिवाज और स्त्री–संवेदनाएँ केवल सांस्कृतिक औपचारिकताएँ नहीं, बल्कि जीवंत ज्ञान परंपरा का रूप लेकर सामने आती हैं। इस प्रकार शिवानी का साहित्य लोकमानस का गहरा दस्तावेज बन जाता है, जिसमें समाज की स्मृतियाँ, रिश्तों की मर्यादा और लोकानुभव की सरल बुद्धि एक साथ गुँथी हुई दिखाई देती हैं।

आत्मानुभूति और आध्यात्मिक दृष्टि

शिवानी की रचनाओं में आत्मानुभूति का स्वर भारतीय ज्ञान परंपरा की उस धारा से जुड़ता है, जहाँ आत्मा को सत्य का स्रोत और अनुभव को ज्ञान का पहला माध्यम माना गया है। जैसे उपनिषदों में 'आत्मानं विद्धि' (स्वयं को जानो) की वाणी सुनाई देती है, वैसे ही शिवानी के पात्र भी अपने भीतर झाँककर जीवन के अर्थ को खोजते हैं। शिवानी के उपन्यास 'श्मशान चंपा' और 'चौदह फेरे' में यह विशेष रूप से चित्रित हुआ है। 'श्मशान चंपा' में 'चंपा' और 'कमलेश्वरी' जीवन की निस्सारताओं और असफलताओं से तंग आकर अपने जीवन को आध्यात्मिकता की ओर मोड़ देती हैं जहाँ वह अपने अस्तित्व को मिटाकर "श्री श्री गुरु केनाराम की अधम दासी..." [6] के रूप में स्वीकृत कर लेती है। वहीं 'चौदह फेरे' में नंदी भी जीवन की मोह–माया से मुक्ति के लिए आध्यात्मिकता का सहारा लेती है। 'नंदी' एक तापसी को देखकर कहती है – "उस तापसी के काले चेहरे पर कैसी अद्भुत शांति और संतोष की चमक थी। एक गेरुआ साड़ी पहने वह दिन–भर कीर्तन गाती रहती थी, उसी की तरह सिर मुंडाकर गेरुआ वसन पहनकर नन्दी ह्रदय के दुरूख को भुला देगी।" [7] शिवानी की इन स्त्री पात्रों के लिए 'आध्यात्मिकता' आत्मसम्मान और आंतरिक संतुलन को पुनः प्राप्त करने का मार्ग बन जाती है। वे पीड़ा को नकारती नहीं, बल्कि उसे आत्मबोध और आत्मपरिवर्तन का साधन बना लेती हैं। यह आत्मानुभूति भारतीय ज्ञान परंपरा की उस सहज धारा को पुनर्जीवित करती है, जहाँ मुक्ति बाहरी परिस्थितियों में नहीं, बल्कि अंतः करण की शांति में खोजी जाती है। इस प्रकार शिवानी की नायिकाएँ आत्म–खोज की यात्रा के माध्यम से जीवन के गहनतम सत्य को छूने का साहस करती हैं।

निष्कर्ष

शिवानी का साहित्य भारतीय ज्ञान परंपरा की गहरी जड़ों से जुड़ा हुआ है, जिसमें जीवन केवल मानसिक या बौद्धिक अनुभूति नहीं, बल्कि आत्मिक संवेदना, कर्त्तव्य, संस्कार, लोकबुद्धि और आध्यात्मिक अनुभूति का समग्र अनुभव है। उनके उपन्यासों में स्त्री पात्र मात्र भावनात्मक प्राणी नहीं, बल्कि जीवन के सत्य को पहचानने वाली चेतन आत्माएँ हैं, जो संघर्षों, त्याग और आत्मान्वेषण के माध्यम से अपने अस्तित्व को नई परिभाषा देती हैं। धर्म, कर्त्तव्य, लोकसंस्कृति, संस्कार और आत्मबोध – ये सभी तत्त्व शिवानी की रचनाओं में न केवल जीवंत रूप में उपस्थित हैं, बल्कि आधुनिक जीवन की जटिलताओं के बीच भी भारतीय संस्कृति की निरंतरता को प्रतिष्ठित करते हैं। शिवानी की स्त्रियाँ परंपरा को अंधानुकरण नहीं बनातीं, बल्कि उसमें नये अर्थ और चेतना का संचार करती हैं। वे जब–जब टूटती हैं, तब–तब भीतर की आत्मशक्ति उन्हें संभालती है, जो भारतीय ज्ञान परंपरा की 'आत्मानुभूति' और 'मोक्ष' की अनुभूति से जुड़ती है। यह दृष्टि पाठक को यह महसूस कराती है कि जीवन का वास्तविक अर्थ बाहरी उपलब्धियों में नहीं, बल्कि अंतः करण की शांति और

आत्मसंतोष में निहित है। इसी कारण शिवानी का साहित्य केवल कथा नहीं, बल्कि एक जीवंत सांस्कृतिक दस्तावेज और भारतीय ज्ञान परंपरा का आधुनिक पुनर्पाठ बन जाता है। शिवानी के उपन्यास यह सिद्ध करते हैं कि चाहे समय कितना ही बदल जाए, भारतीय सभ्यता की आत्मा – आत्मबोध, करुणा, कर्त्तव्य, त्याग और आध्यात्मिकता – आज भी मानव जीवन को दिशा देने की शक्ति रखती है।

संदर्भ सुची

1. मायापुरी, शिवानी, राधाकृष्ण पेपरबैक्स दिल्ली, संस्करण – 2019, पृष्ठ संख्या – 80
2. चौदह फेरे, शिवानी, राधाकृष्ण पेपरबैक्स दिल्ली, संस्करण – 2021, पृष्ठ संख्या – 112
3. मायापुरी, शिवानी, राधाकृष्ण पेपरबैक्स दिल्ली, संस्करण – 2019, पृष्ठ संख्या – 16–17
4. चौदह फेरे, शिवानी, राधाकृष्ण पेपरबैक्स दिल्ली, संस्करण – 2021, पृष्ठ संख्या – 65
5. चौदह फेरे, शिवानी, राधाकृष्ण पेपरबैक्स दिल्ली, संस्करण – 2021, पृष्ठ संख्या – 70
6. 'मशान चंपा, शिवानी, राधाकृष्ण पेपरबैक्स दिल्ली, संस्करण – 2021, पृष्ठ संख्या – 123
7. चौदह फेरे, शिवानी, राधाकृष्ण पेपरबैक्स दिल्ली, संस्करण – 2021, पृष्ठ संख्या – 34